जितेंद्र श्रीवास्तव की कविताएं

नमकहराम

आंखों के जल में होता है नमक
पर कितना
किससे पूछा जाये!

क्या वह स्त्री ठीक ठीक बतायेगी
आंखों के जल में नमक का अनुपात
जिसकी उम्र का अधिकांश
आंसुओं से भीगे आंचल को सुखाने में बीता है

या बतायेगी वह अपराधी घोषित कर दी गयी नदी
जिसने समुद्र में अपने विलय से इ।कार कर दिया

वैसे पूछा तो उससे भी जा सकता है
जिसकी मां स्वर्ग सिधार गयी उसके जन्म समय
प्रसव पीड़ा, रूढ़ियों और सुविधाओं की कमी से

निश्चय ही उसका कंठ अब भी सूखा होगा
पर वह हुआ निरा पुरुष तो बोलेगा कितना सच!

सदियों से आंखों की गहराई का उपमान रहा है समुद्र
पर शायद ही कभी किसी ने याद किया हो
दोनों को साथ साथ नमक के लिए
शायद ही कभी किसी ने विचार किया हो
दोनों के खारेपन के अंतर पर

समुद्र चाहे जितना हो अगम
छिपा नहीं पाता अपना खारापन
पर स्त्रियां अनादिकाल से पी रही हैं अपना खारापन
बदल रही हैं
आंखों के नमक को चेहरे के नमक में
और पुरुष चमत्कृत है खुश है
कि यह रूप लावण्य उसके लिए है

वह खुश होता है जैसे समुद्र पर
वैसे ही स्त्री पर
उसके लिए दोनों महज सौंदर्य हैं
कभी कभी क्रोध में
रक्त मज्जा में समाये स्वभाववश
कहता वह दोनों को अबूझ भी

वैसे पूछिए कभी किसी ऐसे पुरुष से
जिसने प्रेम नहीं किया स्त्री को स्त्री में बदलकर
कि कितना नमक होता है
आंखों से बहती जलधारा में
तो वह नहीं बता पायेगा
सम्भव ही नहीं बता पाना उसके लिए

यह समुद्र का पानी नहीं
जिससे छान लिया नमक
यह पीड़ित खदबदाती आत्मा का जल है

tadbhav.com home page
● ctrl + (Zoom) ● ctrl - (ZOOM OUT) ● ctrl 0 (FIT TO PAGE)

इसमें चाहे जो हो नमक का अनुपात वह अनमोल है
और मुहावरे में कहें तो इस नमक को
अपना सुख समझता पुरुष पूरा नमकहराम है।

बिजली की तरह गिरता हुआ

यह पीपल के पत्तों सा झरता हुआ समय है
जब बहुत सारे लोगों के लिए
मित्रता फुर्सत के क्षणों का शगल बन गयी है।

फुर्सत हो तो याद आयें मित्र
न कटते हुए समय को
सुपारी की तरह काटने के लिए
और जो न हो फुर्सत
तो बंहटिया दें मिलने पर
आखिर क्यों व्यर्थ करें वे अपने उपजाऊ समय को

अब उन दिनों को सिर्फ याद किया जा सकता है
जब समय से समय चुराकर लोग मिलते थे अपनों से
जो जिक्र आये उनकी व्यस्तता का
तो लजा जाते थे
कहते थे शर्मिंदा कर रहे हैं आप
कोई भी व्यस्तता या सफलता
बड़ी तो नहीं है अपनों से

तब लगता था जैसे मन की गति के साथ साथ डगर रहा है समय
हालांकि तब भी समय अपनी ही गति से चलता था
पर रोक नहीं पाता था जीवन की गति
तब अपनों की आंखों में देखा जा सकता था आरपार

लेकिन अब मुश्किल हो गया है
अपनी ही आंखों के आरपार देखना
अब बहुत कम लोग हैं
जो आईने के सामने खड़े होकर साहस कर सकें
स्वयं से नजरें मिलाने का

किसी भी समय में
जिन रिश्तों को होना चाहिए पानीदार
और पानी की तरह पारदर्शी
वे अब काठ की तरह हैं

कोई माने या न माने
पर बिजली की तरह गिरता हुआ यही सत्य है हमारे समय का
मृत्यु जितना सत्य।

कायांतरण

दिल्ली के पत्रहीन जंगल में
छांह ढूंढ़ता
भटक रहा है एक चरवाहा
विकल अवश

उसके साथ डगर रहा है
झाग छोड़ता उसका कुत्ता

कहीं पानी भी नहीं
कि धुल सके वह मुंह
कि पी सके उसका साथी थोड़ा सा जल

तमाम चमचम में
उसके हिस्से पानी भी नहीं
वैसे सुनते हैं दिल्ली में सब कुछ है
सपनों के समुच्य का नाम है दिल्ली

बहुत से लोग कहते हैं
उन्हें पता है
कहां कैद हैं सपने
लेकिन निकाल नहीं पाते उसे वहां से

हमारे बीच से ही

tadbhav.com home page
● **ctrl +** (Zoom) ● **ctrl -** (ZOOM OUT) ● **ctrl 0** (FIT TO PAGE)